चतुर्थ अध्याय

विवेच्य उपन्यासों में चित्रित राजनीतिक समस्याएँ

''विवेच्य उपन्यासों में चित्रित राजनीतिक समस्याएँ''

प्रस्तावना -

भारतीय इतिहास का आधुनिक काल अंग्रेजों के शासन काल से प्रारंभ होता है। ''अंग्रेजों के भारत में आने का उद्देश्य चाहे कुछ भी रहा हो, देश की अव्यवस्थित राजनैतिक परिस्थिति और अन्य कारणों ने अंग्रेजों को भारत का साम्राज्य दे दिया और वे उसके कर्ता-धर्ता बन बैठे।''[1] परंतु भारतीय जनता ने अंग्रेजी शासन का स्वीकार नहीं किया। सन् 1857 के विद्रोह से पहले उन्नसवीं शती के पूर्वार्ध में ही भारतीय जनता ने कई बार अंग्रेजी शासन को समाप्त करने की कोशिश की।

हमारे राष्ट्रीय जागरण का काल सन् 1857 की क्रांति से आरंभ होता है। इस क्रांति के अंतर राष्ट्रीय जीवन में सजीवता और साहस का प्रचार होता चला गया। यद्यपि कुछ लेखकों ने इस क्रांति को देश-द्रोह का नाम दिया है।[2] कुछ लोगों ने इसके मूल में स्वार्थ पाया है, लेकिन प्रक्रिया एवं प्रकृति को देश भक्ति से स्वर संज्ञा नहीं दी जा सकती। ''इस क्रांति ने समूचे देश को ऐसा झकझोरा कि पुनः मध्य युगीन सुप्तावस्था की ओर लौटना असंभव था। सामंत वर्ग के नेतृत्व में ही सही पर जनता ने विद्रोह में भाग लेकर और भीषण दमन और अत्याचार की चक्की में पीसकर जन संघर्ष का पहला पाठ सिख लिया।''[3]

सन् 1857 का विद्रोह असफल हो गया और उसके बाद भारत का शासन ईस्ट इंडिया कंपनी के हाथ से निकलकर 1 नवंबर, 1858 में ब्रिटिश साम्राज्ञी के हाथों में जा पहुँचा।

धीरे-धीरे भारत में वैधानिक राजनीति का प्रभाव बढ़ने लगा। इसकी सबसे बड़ी घटना 1885 में भारतीय राष्ट्रीय काँग्रेस की स्थापना थी। काँग्रेस धीरे-धीरे उग्र राजनीति के प्रभाव में आती गई। सन् 1889 में पंद्रहवें काँग्रेस अधिवेशन में सुरेंद्रनाथ बॅनर्जी ने लॉर्ड कर्जन के शासन की निंदा करते हुए स्पष्टतः कहा कि ''अपनी शिकायतों को रफा करने के लिए दो में से एक उपाय

---

1. डॉ. कृष्ण बिहारी मिश्र - आधुनिक सामाजिक आंदोलन और आधुनिक हिंदी साहित्य, पृ. 53
2. ब्रजरत्न दास - भारतेंदु युग, पृ. 7
3. शिवदान सिंह चौहान - हिंदी गद्य-साहित्य, पृ. 32

का सहारा लेना पड़ेगा। एक है विधानवाद और दूसरा है क्रांति। हम लोगों ने अपना रास्ता चुन लिया है सरकार अपना रास्ता चुन ले।''[1]

उन्नसवीं शती के अंत तक काँग्रेस की सिर्फ यही माँग थी कि अंग्रेजी शासन में भारतीयों का सहयोग और प्रतिनिधित्व हो। सन् 1906 को कलकत्ता काँग्रेस में सभापति पद से दादाभाई नौरोजी ने प्रथम बार 'स्वराज्य' शब्द का प्रयोग किया। काँग्रेस ने कुछ उद्देश्य आंदोलन के कार्यक्रम में निश्चित किए, उसमें स्वदेशी, बहिष्कार तथा राष्ट्रीय शिक्षा आदि का समावेश था। बहिष्कार का अर्थ था, विदेशी वस्तुओं का उपयोग न करके राष्ट्रीय धन को बाहर जाने से रोका जाए। स्वदेशी का उद्देश्य था कि केवल भारत में बनी वस्तुओं का उपयोग करके राष्ट्रीय उद्योग धंधों को प्रोत्साहन दिया जाए। ''राष्ट्रीय शिक्षा का उद्देश्य था कि नवयुवकों को सरकारी शिक्षा संस्थाओं में न पढ़ाया जाए जिनका दास वृत्ति तथा नौकरशाही रुचि पैदा करना ही मुख्य ध्येय था।''[2]

सांप्रदायिक विशेष को बढ़ाने के लिए सन् 1906 में ही सरकार के प्रोत्साहन से आखिल भारतीय मुस्लिम लीग की स्थापना हुई। सन् 1919 में सबसे पहले गांधीजी के नेनृत्व में राष्ट्रीय आंदोलन भारतीय जनता का आंदोलन बना। इसके बाद राष्ट्रीय नेतृत्व की बागड़ोर गांधीजी के हाथ में आ गई। 1920 में पंजाब हत्याकांड तथा खिलाफत के प्रश्न पर गांधीजी ने फिर एक बार सविनय अवज्ञा आंदोलन शुरू किया। आंदोलन के कार्यक्रम में उपाधियाँ लौटाना, सरकारी शिक्षा का बहिष्कार आदि बातें सम्मिलित थी। इस बार आंदोलन की एक खास विशेषता थी कि नारी और मजदूरों ने भी इसमें सक्रिय भाग लिया था।

अंग्रेजों का मकसद था किसी भी हालत में भारत की स्वतंत्रता की माँग टाली जा सके। आचार्य नरेंद्र देव के शब्दों में ब्रिटिश नीति की वह चाल रही है कि ''संधी-पत्रों की पहली धारा में वह पूर्ण स्वतंत्रत्रा स्वीकार करती है और अगली धाराओं में उस पर अनेक प्रकार के प्रतिबंध लगा देती है।'' सन् 1935 के विधान में प्रांतों को स्वायत शासन का अधिकार मिला था, लेकिन गवर्नर को वीटो का अधिकार भी दिया गया था। 3 सितंबर, 1939 को द्वितीय विश्वयुद्ध छिड़ गया

1. मनमथनाथ गुप्त - राष्ट्रीय आंदोलन का इतिहास, पृ. 227
2. आ. नरेंद्र देव - राष्ट्रीयता और समाजवाद, पृ. 190

। तत्कालीन वायस राय ने भारतीय जनता और उसके प्रतिनिधियों की राय लिए बिना ही भारत को युद्ध में सम्मिलित किया।

सन् 1940 से ही मुस्लिम लीग ने स्पष्टतः पाकिस्तान अपना ध्येय बना लिया। पाकिस्तान शब्द का प्रयोग सर्वप्रथम डॉ. इकबाल ने सन् 1930 में मुस्लिम लीग के अध्यक्षीय भाषण में किया था। मुस्लिम लीग तथा जिन्ना की राष्ट्रविरोधी नीति तथा अंग्रेजों की कूटनीति ने इसका समर्थन किया। पंडित जवाहरलाल नेहरू के नेतृत्व में अस्थायी सरकार बनी जिसमें मुस्लिम लीग शामिल न हुई। काँग्रेस को पाकिस्तान की माँग स्वीकार करनी पड़ी, क्योंकि यह डर था कि ये दंगे संपूर्ण भारत को ग्रस्त कर लेंगें और फिर भयानक स्थिति उत्पन्न होगी। 3 जून, 1947 को पाकिस्तान की माँग स्वीकार कर ली गई। अंततः 15 अगस्त, 1947 को भारत तथा पाकिस्तान दो स्वतंत्र राज्य बन गए। इसके पश्चात् भीषण दंगे शुरू हुए। 30 जनवरी, 1948 को सांप्रदायिक एकता के प्रयास में गांधीजी शहीद हुए। 26 जनवरी, 1950 को नए संविधान के अनुसार भारतीय गणराज्य का जन्म हुआ।

12 जून, 1915 को प्रधान मंत्री इंदिरा गांधी ने श्री राजनारायण के विरुद्ध चुनाव का मुकदमा हार गई और इसके बाद आपात्कालीन स्थिति की घोषणा कर दी गई। फिर से चुनाव हुए, इंदिरा गांधी को जनता पार्टी ने हटा दिया। आपात्कालीन स्थिति की घोषणा कर दी गई। इस इमर्जेन्सी के समय की स्थिति का सजीव चित्रण राही जी ने किया है।

भारत के जिस हिस्से का नाम पाकिस्तान रखा गया, वहाँ से करोड़ों की संख्या में शरणार्थी आए। उन्होंने अपने ही हाथों खड़े किए मकानों को जलते देखा। इसी समय धर्म के नाम पर विशाल भारत भूमि के दो टुकड़े हुए थे। धर्मांध हिंदुओं, मुसलमानों ने अमानवीय रूप से एक-दूसरे का संहार किया। अबोध बच्चे और लाचार बूढ़ों को भी मार डाला गया। भारत के इस विभाजन ने लाखों लोगों को अपने सुरखों की जमीन छोड़कर जाने को बाध्य कर दिया। इस दौरान धर्म के नाम पर जो हिंसा, अनाचार और अमानवीय घटनाएँ घटी उन सभी ने लेखक के मानस पर बड़ा गहरा प्रभाव डाला।

आज़ाद भारत के बारे में डॉ. अर्जुन चव्हाण जी ठीक ही लिखते हैं- ''आज़ादी के बाद का राजनीतिक परिवेश देखकर लगने लगा कि जन मानस की स्वतंत्रत्रापूर्व की आकांक्षाएँ

कुचलती जा रही हैं। आज़ादी तो मिली परंतु उसके भोग का अधिकार राजनेताओं, पूँजिपतियों औ नौकरशाहों ने अपने लिए सुरक्षित कर लिया और जनता के उत्थान के नाम पर शोषण का दृष्टचक्र चलाकर मानवी जीवन खोखला कर दिया।"[1] जन कल्याणकारी योजना के नाम पर नेताओं ने स्वयं कल्याणकारी योजनाएँ बना ली। कल्याणकारी योजनाएँ लोगों तक पहुँच नहीं पाई। परिणामस्वरूप आम आदमी अत्यंत हीन होकर दम तोड़ता हुआ दिखाई देने लगा। परिणामतः स्वाधीनता के बाद राजनीति में युद्‌ध, राष्ट्रीय एकात्मता, भ्रष्टाचार और प्रशासनिक अव्यवस्था मुख्य समस्या के रूप में दृष्टिगोचर हुई। राजनीति से संबंधित इन चार समस्याओं का राही जी ने अपने उपन्यासों में यथार्थ चित्रण किया है। यहाँ इनका विस्तृत विवेचन विश्लेषण प्रस्तुत है -

4.1 युद्‌ध की समस्या -

युद्‌ध संसार की शांति,अंतर्राष्ट्रीय व्यापार, विचारों के स्वतंत्र आदान प्रदान और विभिन्न समाजों के लोगों के बीच संदेश वाहन को नष्ट कर देता है। युद्‌ध केवल व्यक्तियों की नैतिक अवस्था को गिरा देता है। परिवारों का नाश कर देता है। आधुनिक हिंदी साहित्य में युद्‌ध की समस्या का चित्रण अपेक्षाकृत कम हुआ है। श्री चंद्रधर शर्मा गुलेरी ने अपनी सुप्रसिद्‌ध कहानी 'उसने कहा था' में प्रथम विश्वयुद्‌ध का वर्णन करते हुए उसके भयंकर परिणामों की ओर संकेत किया है।

राही मासूम रजा ने 'आधा गाँव' के एक पात्र मेजर तन्नु द्‌वारा जो द्‌वितीय विश्व युद्‌ध में सक्रिय भाग लेने के बाद अपने गाँव लौटता है, युद्‌ध के संबंध में अपने महत्त्वपूर्ण विचार प्रकट किए हैं। आधुनिक काल में युद्‌ध हजारों एवं लाखों सैनिकों के बीच होता है जो विभिन्न देशों के निवासी होते हैं। इसी तथ्य की ओर संकेत करते हुए मेजर तन्नु कहते हैं कि "लड़ाई में मरनेवाले बड़ी बेबसी की मौत मरते हैं, मारनेवाला भी बड़ा बदसूरत हो जाता है, क्योंकि अपनी जान बचाने के लिए वह सामनेवाले को दुश्मन मानते और उस से नफरत करने पर मजबूर होता है। मुमकिन है कि अगर उनमें से कोई मुझे यहाँ गंगौली मिलता तो मैं उसे सिगरेट पिलाता, गन्ने का रस पिलाता, उसे अपने तालाब में नहाने की दावत देता और फिर रात को उसके लिए किसी ढोल की तरह खिंचे हुए पलंग पर नर्म और गर्म बिस्तर लगवाता और उससे उसके मुलक की बातें करता

---

1. डॉ. अर्जुन चव्हाण - राजेंद्र यादव के उपन्यासों में मध्यवर्गीय जीवन, पृ. 56

और उसे अपने मुलक की बातें सुनाता। लेकिन वहाँ मैंने उसे मार डाला। क्योंकि अगर मैं उसे न मारता तो वह मुझे मार डालता।''[1]

राही जी एक अन्य मरते हुए सिपाही की दयनीय दशा का वर्णन करते हुए कहते हैं कि मेजर तन्नू को ''न जाने क्यों इतालवी सिपाही याद आया जिसे खुद उसने अपनी संगीन पर उठा लिया था। मरते-मरते उसकी आँखों में एक हैरत थी। शायद वह यह सोच रहा था कि वह क्यों मर रहा है। उसने कुछ कहा भी, तन्नू उसे सुन न सका या समझ न सका।''[2] इस प्रकार राहीजी अनेक उदाहरण प्रस्तुत करके यह स्पष्ट करते हैं कि युद्ध के क्षेत्र में होनेवाली मृत्यु बहुत ही भयंकर होती है क्योंकि मरते समय व्यक्ति अपने परिवार से बहुत दुर होता है।

युद्ध के परिणामों में एक दुष्परिणाम यह भी होता है कि एक देश के सैनिक शत्रु देश के सैनिकों के साथ युद्ध नहीं करते अपितु वहाँ की जनता के साथ भी अत्याचार करते हैं। सैनिकों के इसी अनैतिक व्यवहार की ओर संकेत करते हुए राही जी कहते हैं कि तन्नू को गंगौली लौट आने के पश्चात् युद्ध क्षेत्र की सभी घटनाएँ धीरे-धीरे याद आने लगी। उसे यह याद आने लगा कि मैदान जंग में भूख किस तरह बढ़ जाती है। ''उसे चालीस-पैंतालीस साल की वह बेनाम सिजिकियन औरत याद आई जिसके साथ उसने जिना किया था। रजामंदी का सौदा नहीं जिना। वह स्त्री कह रही थी मैं जानती हूँ मेजर हसन् कि तुम सिर्फ मेजर नहीं हो। तुम तन्नू भी हो। शब्बू मियाँ के इकलौते लड़के तन्नू ? क्या तुम्हें अपनी माँ की याद नहीं आती ? जरूर याद आती होगी। वह जिंदा होती तो भी मूझसे कुछ छोटी ही होती। जिसे तुम मेरा स्कर्ट समझ रहे हो वह तो तुम्हारी माँ का गरारेदार पजामा है पगले, उतारो.... उतारो....।''[3]

इस प्रकार राही जी अनेक उदाहरणों के द्वारा यह स्पष्ट कर देना चाहते हैं कि युद्ध हमारे देश की ही नहीं वरन् समस्त विश्व की एक शाश्वत समस्या है।

4.2 राष्ट्रीय एकात्मता की समस्या -

आधुनिक युग में एकात्मता तीन नामों से पुकारी जाती है, प्रथम भावात्मक एकात्मता, द्वितीय सामाजिक एकात्मता और तृतीय राष्ट्रीय एकात्मता। जातिवाद अस्पृश्यता,

---

1. राही मासूम रजा - आधा गाँव, पृ. 151
2. वही, पृ. 209
3. वही, पृ. 214

भ्रष्टाचार वर्गवाद, भाषावाद आदि मनुष्य की वे भावनाएँ हैं जो विभिन्न आधारों से उन्हें दूसरे मनुष्यों से विभेदीकरण करने के लिए बाध्य करती हैं। इन भावनाओं में विभेदीकरण न हो और मनुष्यों में भावना संबंधी एकता हो यही भावात्मक एकात्मकता कहलाती है। यह भावात्मक एकता शिक्षा, नैतिक शिक्षा और धर्म आदि के माध्यम से होती है। भावात्मक एकता की वृद्धि में ही राष्ट्रीय एकता का विकास होता है। भारत की राष्ट्रीय और सामाजिक एकता के आधार सांस्कृतिक एकात्मकता, भाषाई एकात्मकता और नैतिक एकात्मकता हैं।

सांस्कृतिक एकता में धर्म ने बड़ा महत्त्वपूर्ण काम किया है। भारत के चारों चारों दिशाओं में स्थापित तीर्थ स्थानों पर देश के सभी भागों में से लाखों लोगों का हर वर्ष एकत्रित होना यहाँ की धार्मिक एकता का प्रमाण है।

भारत में भाषाओं की संख्या काफी है। लेकिन सौ से ऊपर बोलियाँ और चौदह स्वीकृत भाषाएँ जिन स्रोतों से निकली हैं वे आर्य और द्राविड़ नामक दो ही भाषाएँ हैं। परिणामसवरूप भारत की सभी भाषाओं में विचारों की एकरूपता है और उनके साहित्यिक विषय भी प्रायः एक से हैं। इतना ही नहीं विभिन्न भाषाओं में प्रस्तुत दर्शन, महाकाव्यों के विषय, पुराणों की कहानियाँ, लोकसाहित्य में वर्णित रीति-रिवाजों तथा संस्कारों, धार्मिक क्रियाओं, सदाचार के नियमों और सामाजिक संस्थाओं के विवेचनों में पूर्व से पश्चिम और उत्तर से दक्षिण की एक भावात्मक संस्कृति परिलक्षित होती है।

स्वाधीनता के बाद राजनैतिक दलगत प्रवृत्तियों का जो विकास हो गया है उससे बड़ी संख्या और अल्पसंख्या के अधिकार एक-दूसरे के विरोध में आ गए हैं। भाषा के नाम पर कई राज्यों के अलग संख्यावाले समूह नैतिक अखंड़ता का विरोध करने लगे हैं। धीरे-धीरे ये विरोधी भावनाएँ बढ़ने लगी एवं भारतीय एकता छिन्न-भिन्न होने लगी, लोगों में क्षेत्रीय भावनाओं का विकास होने लगा। फलतः राष्ट्रीय एकात्मता खतरे में आ गई।

राही मासूम रजा अपने उपन्यास 'टोपी शुक्ला' में भारत की इसी दशा की ओर संकेत करते हैं। वे कहते हैं कि भारत में नौकरियाँ जाति-पाँति के आधार पर दी जाती हैं, योग्यता के आधार पर नहीं। इस संबंध में वे कहते हैं कि भारत में "कुजड़ों, कसाइयों, सैयदों, जुलाहों, राजपुतों, मुस्लिम राजपूतों, बारहसेनियों, अरवालों, कायस्थों, ईसाइयों, सिक्खों गरज की सभी

के लिए कम या अधिक गुंजाइश है। परंतु हिंदुस्तानी कहाँ जायें ? लगता है कि ईमानदार लोगों को हिंदू-मुसलमान बनाने में बेरोजगारी का हाथ यह भी है।''[1]

इस प्रकार राही जी का यह मत है कि भारतीयों में एकात्मकता की भावना की जागृति होनी चाहिए और यह अत्यंत आवश्यक बात है। कहीं भी किटरी भी भारतवासी के साथ उसकी विशिष्ट जाति के आधार अच्छा या बुरा व्यवहार नहीं होना चाहिए, क्योंकि भारत माता की दृष्टि में सभी भारतीय समान हैं। किंतु आज धर्म, जाति, प्रांत एवं भाषा जैसे भेदों के कारण हमारी राष्ट्रीय एकात्मता संकट में आ गई। राही जी ने इसका यथार्थ चित्रण किया है।

4.3 भ्रष्टाचार की समस्या -

भ्रष्टाचार व्यक्ति का वह आचरण है जो अन्य व्यक्तियों के स्वार्थ या समाज के हित की उपेक्षा करते हुए भी उसके निजी स्वार्थ की सिद्धि में सहायक होता है। स्वार्थ भौतिक या आर्थिक हो, यह बात आवश्यक नहीं है। शारीरिक आनंद, मानसिक संतोष अथवा सामाजिक प्रतिष्ठा प्राप्त करने के उद्देश्य से भी मनुष्य सामाजिक हितों की उपेक्षा कर देता है।

दरिद्रता तथा बेरोजगारी भ्रष्टाचार के प्रमुख कारण है, किंतु समाज में ऐसे व्यक्ति भी भ्रष्टाचार के दोषी पाए जाते हैं जो उच्च पदों पर कार्य कर रहे हैं, जिनका समाज में पर्याप्त सम्मान होता है, तथा जिनके पास आवश्यकता से अधिक धन या सुख सुविधाओं के सभी साधन हैं। इसका कारण यह महत्त्वपूर्ण मनोवैज्ञानिक तथ्य है कि मनुष्य का जीवन मुख्यतः उसके संवेगों तथा प्रवृत्तियों द्वारा शाखित होता है। यदि ये संवेग तथा मूल प्रवृत्तियाँ शिक्षा के द्वारा परिमार्जित तथा उचित शिक्षा की ओर अग्रसर हो जाती हैं तो व्यक्ति का चरित्र उच्चकोटि का हो जाता है।

इसके विपरीत यदि मनुष्य के संवेगों तथा मूल प्रवृत्तियों का परिमार्जन नहीं होता और वे अवांछनीय दिशा की ओर अग्रसर हो जाती है, तो व्यक्ति सुशिक्षित, संपन्न एवं सुखी होते हुए भी अतिशय अधिकार लिप्सा, लालच, पक्षपात, प्रतिशोध की भावना, स्वार्थ परायणता आदि अवगुणों से मुक्त नहीं हो पाता। यही समाज विरोधी भावनाएँ तथा दुर्गुण ऐसे व्यक्तियों को भ्रष्टाचार करने के लिए प्रोत्साहित करते हैं।

---

1. राही मासूम रजा - टोपी शुक्ला, पृ. 13

आज समाज में प्रशासनिक भ्रष्टाचार, राजनैतिक भ्रष्टाचार, व्यावसायिक भ्रष्टाचार, शैक्षणिक भ्रष्टाचार तथा धार्मिक भ्रष्टाचार आदि पर्याप्त मात्रा में मौजुद हैं। भ्रष्टाचार वर्तमान काल की मुख्य समस्या है। आधुनिक हिंदी साहित्य में खासकर उपन्यासों एवं कहानियों में इस समस्या का चित्रण हुआ है। उपन्यास सम्राट प्रेमचंद की कहानी 'नमक का दरोगा' में मुंशी वंशीधर को उनके पिता नौकरी को भेजने से पहले उपदेश देते हुए कहते हैं कि ''ऐसा काम ढूँढ़ना जहाँ कुछ ऊपरी आय हो। मासिक वेतन तो पूर्ण मासी का चाँद है, जो एक दिन दिखाई देता है और घटते-घटते लुप्त हो जाता है। ऊपरी आय बहता हुआ स्रोत है, जिससे सदैव प्यास बुझती है। वेतन मनुष्य देता है, इसी से उसमें वृद्धि नहीं होती, ऊपरी आमदनी ईश्वर देता है, इसी से उसमें बरकत होती है।''[1]

हरिशंकर परसाई की प्रसिद्ध कहानी 'भोलाराम का जीव' में एक सरकारी अधिकारी नारद से रिश्वत माँगते हुए कहता है कि ''आप हैं वैरागी, दफ्तरों के रीति-रिवाज नहीं जानते....भई, यह भी एक मंदिर है। यहाँ भी दान पुण्य करना पड़ता है, भेंट चड़ानी पड़ती है। भोलाराम की दरख्वारूनें उड़ रही हैं, उन पर वजन रखिए।''[2]

राही मासूम रजा ने 'आधा गाँव' में पुलिस के अधिकारियों द्वारा रिश्वत लेने की प्रवृत्ति का स्वाभाविक वर्णन किया है जो रिश्वत के लालच में अपराधियों को छोड़कर निरपराधियों की जान लेने में जरा भी नहीं हिचकिचाते। 'आधा गाँव' से उद्धृत निम्नलिखित घटना इस संबंध में द्रष्टव्य है।

गंगौली में उत्तर पट्टी एवं दक्खिन पट्टी नाम के शीआ मुसलमान जमींदारों के दो मुहल्लेवालों में आपस में झगड़े हुआ करते थे। लोगों का विश्वास था कि 'इमाम हुसैन जो मुहर्रम में कर्बल से हिंदुस्तान आते हैं तो नौ की रात को वह गंगौली की दक्खिन पट्टी के बड़े ताजिए के चौक पर दरबार करते हैं। उत्तर पट्टीवाले इसे बरदास्त नहीं कर सकते थे। इसलिए हकीमसाहब को बड़ा अरमान था कि किसी तरह उनके चौक पर भी कोई मौज्जा हो जाए कि दक्खिन पट्टीवालों का गरूर टूट जाय।'

---

1. प्रेमचंद - मान सरोवर भाग-8, पृ. 278
2. संपादक ज्योत्सना - गद्य-पथ, पृ. 91

यह बिल्कुल एक इत्तफाक हैकि जिन दिनों यह खयाल हकीम साहब को परेशान कर रहा था, उन्हीं दिनों करीब के एक गाँव बारखापुर में एक कत्ल हो गया। हकीम साहब ने थाना कासियाबाद के थानेदार से कह सुनकर अपने एक खास आदमी को मिला चमार को नामजद करवा दिया। चूँकि हकीम डिली अली हादी के भाई और इलाके के बड़े जमींदार थे, इसलिए उन्होंने सिर्फ एक सौ एक रुपए लेकर कोमिला को नामजद कर दिया। तय यह हुआ कि उसके खिलाफ मुकद्दमा बिलकुल बेजान हो जाएगा। इसलिए वे लोग खामखाह छूट जाएँगे।''[1]

कोमिला गिरफ्तार हो गया। उसकी माँ हकीम साहब के पास हायता के लिए दौड़ी। हकीम साहब ने थानेदार को बुलवाया। थानेदार ने वचन दिया कि वह कोमिला को बचाने की कोशिश करेगा। फिर उसने हेड कांस्टेबिल के जरिए कोमिला की माँ से सौ रुपए इस काम के लिए कि वह कोमिला के खिलाफ बने हुए मुकद्दमे को कमजोर कर देगा। हकीम साहब के नौकर गुलाम हुसैन के समझाने पर कोमिला की माता ने उत्तर पट्टी के इमाम चौक पर मन्त मान डाली। जब यह समाचार दक्खिन पट्टीवालों को मिला तो उनका माथा ठनका। इसलिए ''जिस तरह थानेदार का सिमाबाद को उत्तर पट्टी के मोहर्रम के वजह से एक सौ रुपए दिए गए थे, उसी तरह दक्खिन पट्टी की ताजिएदारी की मदत से थानेदार कासिमाबाद को तीन सौ रुपए दिए गए कि कोमिला को फाँसी तो न हो, लेकिन सजा जरूर हो जाए। थानेदार ठाकुर हरनारायण प्रसाद सिंह ने सोचा कि इसमें आखिर उनका क्या नुकसान है। इसलिए यह बात भी तय हो गई।''[2]

कोमिला के पिता बाबूराम की एक अन्य चमार बलिराम से पुरानी शत्रुता थी। अतः कोमिला की गिरफ्तारी का समाचार मिलने पर उसने सोचा कि कोमिला के पिता से बदला लेने का यही अवसर है। अतः बलिराम छः सौ रुपए लेकर थानेदार की सेवा में पहुँचा और अपने दिल की बात बताई। ठाकुर साहब ने हिसाब लगाया। वे इस नतीजे पर पहुँचे कि बाईस सौ एक रुपए बहुत होते हैं। इसलिए उन्होंने बलिराम से भी वायदा कर लिया कि वे भला कलकटर साहब बहादुर के माली की बात कैसे टाल सकते हैं। ''मुकदमा शुरू हुआ। कई बहुत अच्छे गवाह निकल आए।

---

1. राही मासूम रजा - आधा गाँव, पृ. 77
2. वही, पृ. 78

हद तो यह है कि एक चश्मदीद गवाह तक मिल गया। कोमिला को फाँसी की सजा का हुक्म सुना दिया गया।''[1]

इस प्रसंग द्वारा राही जी ने स्पष्ट कर दिया है कि पुलिस के कर्मचारी रिश्वत लेकर किस सीमा तक दुराचार कर सकते हैं।

राही जी ने अपने उपन्यास 'कटरा बी आर्जू' में भी भ्रष्टाचार की समस्या पर प्रकाश डाला है। जब बिल्लो कान्सटेबल जगदंबा प्रसाद से कहती है कि 'घूस खाना एक दम्मे छोड़ दीजिए' तो वह उत्तर में कहता है कि ''हम्मे घूस खाने का सौक ना है। पर करे का। साढ़ सत्तानबे रुपए तनख्वाह में का खायें, का पीये का ले परदेस जायें।''[2] इस प्रकार पुलिस के कर्मचारी यह स्पष्ट कर देते हैं कि भ्रष्टाचार के बिना उन्हें जीवन बिताना मुश्किल काम है। अतः वह हर संभव रूप में घूस लेने का प्रयत्न करते हैं।

सिनेमा में बिकनेवाले टिकटों का विवेचन करते हुए राही जी कहते हैं कि ''सिनेमा के सामने बड़ी भीड़ थी। पुलिस डंडे घुमा रही थी। रिश्वत ले रही थी और टिकटों के ब्लैक में बिकने का बंदोबस्त कर रही थी।''[3] राही जी यह स्पष्ट करते हैं कि यह घूस लेने की प्रवृत्ति पुलिस के निम्न स्तरीय अधिकारी भी अपनी स्थिति के एवं अवसर के अनुसार घूस लेते हैं। थानेदार अशरफुल्लाह खाँ के परिवार का वर्णन करते हुए राही जी कहते हैं, ''उनके खानदान में थानेदारी की परंपरा चली आ रही थी। उनके परदादा इलाहाबाद को तवाली के इन्जार्ज रह चुके थे। ....दादा एनायतुल्लाह खाँ ने बनारस के चेत गंज थाने और फिर कोतवाली चौक के इलाके में अपना सिक्का चलाया। बनारस के महाजन उनके नाम से काँपते थे और उन्हीं पैसों से खाँ साहब ने चहार-सू वाली जमीन लेकर दूकनें बनवाई जिनका किराया आज तक अशफाकुल्लाह खाँ खा रहे थे। उनके पिता विलायतुल्लाह खाँ ने कोतवाली गाजीपुर में सेकेंड ऑफिसर की हैसियत से वह धूम मचाई कि लोग अशफाकुल्लाह खाँ के दादा और परदादा की कोतवाली भूल गए। सन् बयालीस में पंडित शिवशंकर पांडेय ने उन्हीं की मदद से सरकारी खजाना लुटवाया था।''[4]

---

1. राही मासूम रजा - आधा गाँव, पृ. 78
2. राही मासूम रजा - कटरा बी आर्जू, पृ. 47
3. वही, पृ. 106
4. वही, पृ. 95

इस प्रकार राही जी ने अनेक उदाहरण देकर भ्रष्टाचार की भयंकर समस्या का तथ्यात्मक चित्रण प्रस्तुत किया है। वस्तुतः भ्रष्टाचार इस देश का कोढ़ है जो दूर नहीं हो रहा है। राही ने इसका बेबाकी से चित्रण किया है।

4.4 प्रशासनिक अव्यवस्था की समस्या

आधुनिक युग में प्रशासनिक अव्यवस्था की समस्या पर्याप्त मात्रा में पाई जाती है। आज समाज में हर विभाग में अव्यवस्था पाई जाती है, जैसे की शिक्षा विभाग, पुलिस विभाग आदि। पुलिस सरकार की शक्ति होती है, अतः वह राजनैतिक शक्ति मानी जाएगी। पुलिस गुनाहगार को छोड़कर निरापराध लोगों को बिना वजह तंग करती है, यह प्रशासनिक अव्यवस्था का ही द्योतक है।

राही मासूम रजा ने अपने उपन्यास 'कटरा बी आर्जू' में इस समस्या के अनेक पक्षों का विश्लेषण किया है। खासकर आपत्तिकालीन स्थिति के समय पुलिस द्वारा अबोध जनता पर गुप्त रहस्यों को उगलवाने के लिए विवश करने के लिए पुलिस थानों में किए गए क्रूर व्यवहार का हृदयग्राही चित्रण प्रस्तुत करते हुए राही जी यह बतलाते हैं कि आज भी सदैव अपराध के अनुसार ही दंड नहीं दिया जाता है।

आशाराम पर यह आरोप लगाया गया था कि वह सरकार के विरुद्ध कार्य कर रहा है। यह जानकर आशाराम स्वयं पुलिस के भय से छिप जाता है। जाते समय वह एक बार देशराज से भेंट करता है। पुलिस को पता चल जाता है कि देशराज आशाराम का पता जानता है। उसे जानने के लिए रेडियो स्टेशन से उसे पुलिस गिरफ्तार करके ले जाती है। फिर उसको इतना पीटा जाता है कि वह घायल होकर बेहोश हो जाता है। उसका वर्णन करते हुए लेखक कहते हैं कि "जगदंबा प्रसाद ने उसे घसीटकर दूसरी दिवार पर दे मारा। और फिर तीनों सिपाही बड़ी मेहनत से 'पूछताछ' करने लगे। उसे उल्टा लटका दिया गया। उसके पाखाने की जगह में पिसी हुई लाल मिर्च भर दी गई। उसे इलैक्ट्रिक के शॉक दिए गए पर उसे भी जिद आ गई थी कि वह अपने दोस्त का पता नहीं बताएगा। वह न जाने कितनी बार बेहोश हुआ और उसे न जाने कितनी बार होश आया। उसने गिनना भी छोड़ दिया था। वह सिर्फ ह खेल खेल रहा था कि यह शर्त लगाता अपने

आप से कि ठोकर कहाँ पड़ेगी। या डंड़ा कहाँ पड़ेगा। या सिग्रेट कहाँ बुझाई जाएगी। और अगर उसका अंदाजा सही निकलता तो उसे एक अजीब-सी खुशी होती।

अब उसे यह सोचकर शर्म भी नहीं आती थी कि वह इतने लोगों के सामने नंगा है क्योंकि बदन तो था ही नहीं। बस एक अताह, नाकाबिले बरदाश्त दर्द था और दहकती हुई आग-सी एक प्यास थी।''[1]

इस प्रकार तीन दिनों तक उसको इतना पीटा जाता है कि केवल उसके हाथ-पाँव की हड्डियाँ ही टूट नहीं जाती तो वह हमेशा के लिए पागल भी हो जाता है। इस विवरण द्वारा राही जी पुलिस विभाग के क्रूर व्यवहार की ओर पाठकों का ध्यान आकृष्ट करते हुए इस बात की आवश्यकता प्रकट करते हैं कि गुनाह करनेवाला कौन है ? इसकी जाँच करके ही पुलिसवाले उसे दंड दें। देशराज ने कोई ऐसा अपराध नहीं किया था जिसके लिए उसको बुरी तरह से घायल करके पागल कर दिया जाए।

राही जी अपने उपन्यास 'टोपी शुक्ला' में शिक्षा विभाग के प्रशासन की अव्यवस्था की ओर भी पाठकों का ध्यान आकर्षित करते हैं। टोपी शुक्ला के दोस्त इफ्फन ने हिस्ट्री में एम्. ए. किया। एक डिगरी कॉलेज में उसे इतिहास पढ़ाने की नौकरी मिल गई। लेकिन एक साल बाद उसे स्कूल की मैनेजिंग कमेटी ने उस पर झूठा आरोप लगाकर नौकरी से निकाला। इफ्फन को नौकरी से निकालने का असली कारण क्या था ? इसका वर्णन करते राही जी कहते हैं कि ''परंतु उसी साल मैनेजिंग कमेटी के सेक्रेटरी के लड़के ने हिस्ट्री में एम्. ए. कर लिया। उसके लिए एक जगह की जरूरत हुई।''[2]

इस प्रकार राही जी प्रशासन की अव्यवस्था का स्वाभाविक ढंग से चित्रण किया है जो वर्तमान काल की चिंताजनक समस्याओं में से एक है।

निष्कर्ष -

युद्ध की समस्या का चित्रण करते हुए राही जी ने आधुनिक कालीन युद्ध के भयंकर स्वरूप तथा उसके परिणामों की ओर संकेत किया है। द्वितीय विश्वयुद्ध के भयंकर

---

1. राही मासूम रजा - कटरा बी आर्जू, पृ. 182
2. राही मासूम रजा - टोपी शुक्ला, पृ. 60

परिणाम को राही जी ने स्वयं अपनी आँखों से देखा है। अतः अपने अनुभव तथा अनुभूतियों का स्वाभाविक ढंग से वर्णन करते हुए राही जी ने इस समस्या के भयंकर अनुपात की ओर संकेत किया है।

, राष्ट्रीय एकात्मकता की समस्या का तटस्थ भाव से विश्लेषण करते हुए राही जी ने यह स्पष्ट कर दिया है कि इस समस्या का समाधान तब हो सकता है जब सभी भारतवासी संकीर्ण जाती-पाँति के विचारों से ऊपर उठकर अपने आपको एक सच्चे भारतवासी के रूप में देखें और सभी भारतवासी को अपने भाई समझकर उनके साथ समानता का व्यवहार करें।

राही जी भ्रष्टाचार की समस्या की सर्वांगीणता का चित्रण करते हुए यह बतलाते हैं कि यद्यपि गाँवों के कोने-कोने में भी इसका प्रभाव दिखाई देता है तथापि यह मुख्य रूप से गाँवों के अशिक्षित, असभ्य एवं अबोध व्यक्तियों की अपेक्षा तथाकथित शिक्षित तथा सभ्य लोगों में ही अधिक मात्रा में दिखाई देती है। अंग्रेजी शिक्षा प्राप्त सरकारी कर्मचारी, कोर्ट कचहरी की जानकारी रखनेवाले न्याय करने का ढोंग रचकर नादान गाँववालों को अनेक तरह से लूटते हैं। राही जी ने इस सर्वव्याप्त समस्या का अत्यंत हृदयग्राही चित्रण प्रस्तुत किया है।

प्रशासनिक अव्यवस्था की समस्या का चित्रण करते हुए राही जी ने इस बात की आवश्यकता दिखलाई है कि पुलिस को पूछताछ में बहुत संयम से काम लेना अति आवश्यक है। इस समस्या का समाधान अपराधियों के सुधारने में है, निरपराधियों को बुरी तरह पीट कर घायल करने में एवं पागल बनाने में नहीं। निष्कर्षतः स्पष्ट है कि राही जी ने राजनीति के अंतर्गत आनेवाली समस्याओं में प्रशासनिक अव्यवस्था तथा भ्रष्टाचार की समस्याओं का अत्यंत यथार्थता के साथ चित्रण किया है।